मूल्य: ₹ 25/-

ISSN-2231-1602

# आपका तिस्ता-हिमालय

हिन्दी मासिक

वर्ष : 10, अंक : 104, मई-2019

## अंधेरे के अंतः की उस रोशनी को मेरा सलाम !

## 30 मई अर्थात हिंदी पत्रकारिता की एक अविस्मरणीय तारीख़

# अंधेरे के अंतः की उस रोशनी को मेरा सलाम!

30 मई अर्थात हिंदी पत्रकारिता दिवस। हिंदी पत्रकारिता की एक अविस्मरणीय तारीख़। पतीत मीडिया के इस दौर में आज़ की तारीख़ का हमारे लिए ख़ास महत्व है। एक पत्रकार होने के नाते यह अत्यंत जरूरी है कि हम अपने अतीत की विरासत की पड़ताल करें और अपनी पत्रकारिता की वर्तमान दिशा को सुनिश्चित करें। बेशक यह कार्य बेहद कठिन है और जोख़िम से भरा हुआ भी। इसके बावजूद वर्तमान पत्रकारिता के गिरते मान को बचाये रखने के लिए यह एक जरूरी टास्क है।

हिंदी पत्रकारिता की जो विकास यात्रा रही है,उसके बारे में थोड़ी जानकारी हम अपने पाठकों को भी उपलब्ध करा सकें, यह हमारी कोशिश है। हिंदी पत्रकारिता की दशा और दिशा पर अर्से से वैचारिक विमर्श की ज़रूरत हम महसूस करते आ रहे हैं,इसलिए भी यह विषय हमारे लिए अहम् है। सामाजिक परिवर्तन लाने व राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में हिंदी पत्रकारिता की अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है, जबकि आज़ की पत्रकारिता अपने मार्ग से पूरी तरह भटक चुकी है। गणतंत्र का यह जो कथित चौथा स्तंभ है, लगभग अपनी विश्वसनीयता खो चुका है। परतंत्र भारत में पत्रकारिता एक मिशन थी। निरंकुश सत्ता के ख़िलाफ़ वह जनता की आवाज़ थी। सामाजिक दायित्वबोध एवं राष्ट्रीय आदर्श से प्रेरित पत्रकारिता जनसंपर्क का एक माध्यम तो थी ही, और साथ ही मुक्ति संघर्ष का एक कारगर अस्त्र भी! और आज पत्रकारिता सिर्फ़ एक धंधा बन कर रह गयी है। निरंकुश-बेशर्म सत्ता की दलाली करते रहना और कमीशनखोरी, इसका एक मात्र उद्देश्य बन गया है। जबकि हिंदी पत्रकारिता का अपना एक रोमांचक-गौरवशाली इतिहास रहा है और यह इतिहास अपने भीतर दो कालखंडों को समेटे हुए है। एक कालखंड है स्वतंत्रता पूर्व का और दूसरा स्वतंत्रता के बाद का।

ज्ञातव्य है कि पंडित युगल किशोर शुक्ल ने अपने सीमित संसाधनों के तहत कलकत्ता से 'उदन्त मार्त्तण्ड' नाम से 30 मई 1826 में हिंदी का पहला समाचार पत्र प्रकाशित किया जो ब्रिटिश भारत में एक जोख़िम भरा कार्य था। हम सहज ही समझ सकते हैं कि जब परतंत्र भारत में हुकूमत की मुख़ालिफ़त को कौन कहे,अपने हक़ की बात करना भी एक बड़ा गुनाह था,तब उन्होंने यह किया। उन दिनों किसी हिंदी समाचार पत्र के प्रकाशन का अर्थ था, प्रत्यक्ष रूप से फ़िरंगी हुकूमत को चुनौती देना। ऐसे क्रूर समय में जब बर्बर सत्ता का भय सर्वत्र व्याप्त हो चुका था, तब उसके आगे तन कर खड़ा होना और उसे चुनौती देना खुद को धधकती हुई आग में झोंकने जैसा ही था! आर्थिक कठिनाइयों से जूझते रहना पंडित जी ने सहर्ष क़बूल किया लेकिन फ़िरंगी निरंकुशता के आगे अपने घुटने नहीं टेके। हालांकि आर्थिक तंगी के कारण अंततः उसी साल सितंबर 1826 में उन्हें अपना प्रकाशन स्थगित करना पड़ा। लेकिन 'उदन्त मार्त्तण्ड' जैसे एक निर्भीक हिंदी साप्ताहिक का प्रकाशन और संपादन कर देश और जनता को उन्होंने जो संदेश दिया, वह था ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मुक्ति और स्वराज का। इस अर्थ में 'उदन्त मार्त्तण्ड' छपे हुए काग़ज का मात्र टुकड़ा नहीं था, बल्कि राष्ट्रीय चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति थी। ज़ाहिर है पंडित जी ने अपने साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन किसी वैयक्तिक लाभ अथवा शोहरत पाने के उद्देश्य से नहीं किया था। 'उदन्त मार्त्तण्ड' का शाब्दिक अर्थ है 'समाचार सूर्य' जिसका निहितार्थ था, जालिमों के अंधकारमय शासन का अंत करना। उनके तमाम कृत्यों को प्रकाश में लाना। सत्ता की बर्बरता के ख़िलाफ़ जनाक्रोश को पैदा व संगठित करना।

'उदन्त मार्त्तण्ड' द्वारा पंडित जी ने जिस वैचारिक पत्रकारिता का प्रारंभ कर दिया था,वह एक चिनगारी के बतौर सघन होने लगा और मुक्ति का सपना भी विस्तार पाने लगा। उन दिनों देश के अन्य प्रांतों की तुलना में अपनी बौद्धिक सपन्नता तथा वैचारिक सक्रियता के कारण कलकत्ता जनमानस में एक उम्मीद जगाने लगा था। पंडित जी के पूर्व ही राजाराम मोहन राय ने कई भाषाओं में अपना वैचारिक लेखन प्रारंभ कर दिया था। बेशक राजा राममोहन राय ने वैचारिक पत्रकारिता को एक नया आकाश दिया। उन्होंने अपनी स्वतंत्र पत्रकारिता के माध्यम से खुलकर समाज-जीवन में व्याप्त सदियों पुराने जकड़नों का विरोध किया। धार्मिक पाखंडों के खिलाफ़ पूरी दृढ़ता से लड़ते हुए पूरे बंगाल में समाज सुधार आंदोलन चलाया।1816 की एक मर्मांतिक घटना ने उन्हें पूरी तरह बदल दिया। बड़े भाई की मृत्यु हुई और शव के साथ ही भाई की युवा विदुषी पत्नी को भी बलात जलाकर भस्म कर दिया गया। घर-परिवार और तथाकथित पंडित-समाज के प्रचण्ड विरोध का सामना करते हुए वह सती प्रथा के खिलाफ़ उठ खड़े हुए। अपनी जंग तेज़ करते हुए सती प्रथा के खिलाफ़ लिखना और बोलना शुरू किया। धार्मिक कर्म-काण्डों के विरोध में भी उन्होंने अनेक लेख लिखे। राजा राममोहन राय वह प्रथम भारतीय थे जिन्होंने परतंत्र भारत में कई समाचार पत्रों की स्थापना की और प्रेस की स्वतंत्रता के लिए समझौताहीन संघर्ष किया।

हिंदी पत्रकारिता को गणेश शंकर विद्यार्थी ने एक नयी दिशा दी। सच कहा जाय तो विद्यार्थी जी हिंदी पत्रकारिता का वह सूर्य हैं जिसका ताप हम अब भी महसूस करते हैं। हिंदी पत्रकारिता के आकाश में सर्वाधिक चर्चित और सम्मानित जो नक्षत्र है,उसका नाम है गणेश शंकर विद्यार्थी। वह अक्सर कहा करते थे कि अच्छे आचरण वाले नास्तिकों का दर्जा धर्म के नाम पर दूसरों की आजादी रौंदने और उन्माद-उत्पात मचाने वालों से ऊंचा है। गणेश शंकर विद्यार्थी धार्मिक-उन्माद, फिरकापरस्ती, और पाखंड के कट्टर विरोधी थे। गुलामी को सबसे बड़ा अभिशाप मानते थे। जिन सामाजिक बुराइयों के खिलाफ़ उन्होंने आजीवन जंग की, उसी ने उनकी जान ले ली। उनकी मौत पर व्यथित होकर सुविख्यात साहित्यकार अमृतलाल नागर ने कहा था, 'वे अपने ही घर में शहीद हो गये।' ज्ञातव्य है कि 25 मार्च 1931 को उत्तर प्रदेश के कानपुर में भड़के हिंदू-मुस्लिम दंगे को रोकने का उन्होंने जी-जान से प्रयास किया और कइयों की जान बचायी लेकिन अंततः धर्म-उन्मादियों ने ही उन्हें मार गिराया।

विद्यार्थी जी ने 1913 में ही अपने साप्ताहिक पत्र 'प्रताप' का प्रकाशन प्रारंभ कर दिया था। अपने पत्र में जहां एक ओर वह किसानों की समस्याओं को उठा रहे थे, वहीं दूसरी ओर फ़िरंगी हुकूमत का पुरजोर विरोध। 27अक्टूबर 1924 को उन्होंने धार्मिक-उन्माद और पाखंड पर चोट करते हुए 'धर्म की

आड़' शीर्षक से एक लेख लिखा, जिसमें वह कहते हैं- 'देश में धर्म की धूम है और इसके नाम पर उत्पात किये जा रहे हैं। लोग धर्म का मर्म जाने बिना इसके नाम पर जान लेने और देने के लिए तैयार हो जाते हैं।' हिन्दुत्व व अंधराष्ट्रवाद के ख़तरों का अनुमान वह बहुत पहले ही कर चुके थे। 21 जून,1915 को 'प्रताप' में प्रकाशित अपने एक लेख में वह कहते हैं,'देश में कहीं-कहीं राष्ट्रीयता के भाव को समझने में गहरी भूल की जा रही है। हर रोज इसके प्रमाण हमें मिलते रहते हैं। अगर हम इसके भाव को अच्छी तरह समझ चुके होते तो इससे जुड़ी बेतुकी बातें सुनने में न आती।' एक अन्य लेख में वह कहते हैं, हिंदू राष्ट्र, हिंदू राष्ट्र चिल्लाने वाले भारी भूल कर रहे हैं। इन लोगों ने अभी तक राष्ट्र शब्द का अर्थ ही नहीं समझा है।'

लंबे संघर्ष और बड़ी कुर्बानी के बाद सन् 1947 में हमने फ़िरंगी हुकूमत से आज़ादी तो हासिल कर ली लेकिन अपने मुल्क़ को टूटने से हम न बचा पाये। इसके लिए सिर्फ़ किसी एक व्यक्ति को दोषी ठहराया जाना सही नहीं होगा। दरअसल फ़िरंगी हुकूमत ने जाते-जाते बड़े ही शातिराना तरीक़े से धर्म-उन्मादी और फिरकापरस्त ताक़तों का इसके लिए इस्तेमाल किया। दरअसल अंग्रेजों की जिन नीतियों के कारण देश का विभाजन हुआ, उनके पैरोकार हमारे समाज में आज भी मौजूद हैं जो नये सिरे से एक और विभाजन की रेखा खींच रहे हैं। आज़ स्वतंत्रता के 72 साल बाद के हालात पर भी हमें ग़ौर करना होगा।

आज़ हमारा प्रचार तंत्र पूरी तरह लंपट-लुटेरों और कालाबाजारियों के प्रभाव में है। लंपट पूंजी का वीभत्स वर्चस्व मीडिया पर हावी है। बड़े अख़बारों और टीवी चैनलों के जो मालिक हैं उनके लिए पत्रकारिता मिशन नहीं,बल्कि एक धंधा है। अगर हम छोटे पत्र-पत्रिकाओं और अख़बारों को छोड़ दें तो जो तस्वीर उभर कर सामने आती है वह अत्यंत भयावह ही नहीं,बल्कि बेहद विकृत भी है। सत्ता-शिखर पर आसीन बहुराष्ट्रीय कंपनियों के गुर्गों तथ आर्थिक अपराधियों ने मीडिया के एक बड़े हिस्से को अतिरिक्त सहूलियतें प्रदान कर पूरी तरह अपना गुलाम बना लिया है। सच कहा जाय तो सामाजिक व राष्ट्रीय चेतना को कुंद करने में मीडिया लगा हुआ है। अवैज्ञानिक सोच, धार्मिक-उन्माद व पाखंड का विस्तार करना मानो मीडिया का एक मात्र टास्क रह गया है। यही कारण है कि आज़ का मीडिया सामाजिक व राष्ट्रीय समस्याओं पर उद्वेलित नहीं होता है, बल्कि भ्रष्ट व निरंकुश सत्ता की दलाली करना अपना कर्तव्य समझता है। लेकिन तमाम प्रतिकूलताओं के बीच कतिपय जनपक्षधर पत्रकार आज़ भी हमारे बीच मौजूद हैं जो इस घोर अंधेरे में अपनी वैचारिक पत्रकारिता की उस समझौताहीन धारा का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं जिसने हमारे स्वतंत्रता संग्राम को दिशा दी थी।

पिछले एक दशक के भीतर हमारे ऐसे कई साथी जिन्होंने वैचारिक पत्रकारिता को ले समाज को दिशा दी, वें अंततः निरंकुश सत्ता-सियास का शिकार हो गये हैं और कुछ हैं जिन पर ख़तरा मंडरा रहा है। लेकिन इसके बावजूद हमारे जो साथी सत्ता-शीर्ष के मल-पिल्लुओं व गोदी-गुलाम मीडिया के खिलाफ़ अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता की सौमझौताहीन धारा को बनाये हुए हैं, बेशक वे अंधेरे को एक दीपक दिखा रहे हैं। अंधेरे के अंतः की उस रोशनी को मेरा सलाम!

राजेंद्र प्रसाद सिंह

**30/05/2019**

## लोकमत

आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी 'छाया दी' आत्मकथा डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह की उत्कृष्ट प्रतिभा का समुचित मूल्यांकन करने वाली श्रेष्ठ रचना है। आज जिस तरह आत्मकथा लेखन का विकास हुआ है, उसमें समृद्धि एवं उत्कृष्टता आई है। उसी कड़ी की यह एक कुंजी है। यह कथा साहित्य के सृजन में नित्य प्रयासरत डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की कथा ही नहीं है, बल्कि समाज का सच्चा बिम्ब भी प्रस्तुत करने में सक्षम है। यही नहीं लेखक के जीवन के उतार-चढ़ाव को भी इसमें प्रस्तुत किया गया है। समाज आज किधर जा रहा है, धर्म की क्या अवस्था है, राजनीति में क्या हथकंडे अपनाए जाते हैं इस तरह की समुचित अव्यवस्था का कच्चा-चिट्ठा 'छाया दी' की कथा खोलती है। किन-किन हालातों से लेखक गुजरे एवं उन्होंने कठोर परिश्रम कर आपने आप को संभाला, उसका सच्चा प्रतिबिम्ब यह कथा प्रस्तुत करती है। इसमें बांग्लादेश का मार्मिक चित्रण भी प्रस्तुत हुआ है। वहाँ के परिदृश्य ने लेखक के हृदय को किस तरह मर्माहत किया था, इसका एक ज्वलंत रूप 'छाया दी' में है। मनुष्य के समक्ष सबसे बड़ी समस्या अर्थ की होती है। आर्थिक दृष्टि से कमजोर व्यक्ति को हालात से समझौता करना पड़ता है। अर्थ की महता को बड़े-बड़े विद्वानों ने स्वीकार किया है। लेखक ने भी अर्थ की दारुण पीड़ा को झेला। पढ़ाई-लिखाई के साथ-साथ अपने आप को आत्मनिर्भर बनाया।

दरअसल 'छाया दी' आत्मकथा होने के साथ-साथ एक इतिहास भी है। 'छाया दी' के पात्र काल्पनिक पात्र नहीं हैं बल्कि इनका संबंध लेखक के जीवन से है। लेखक के सुख-दुख के ये पात्र सहभागी हैं। अराजकतापूर्ण माहौल में एक आश हृदय में जगा कर रखने वाले हैं। यह आत्मकथा इतनी रोचक और सारगर्भित लगी की इसे दो बैठकों में ही पढ़ गया। अति शीघ्र 'छाया दी' पर समीक्षात्मक आलेख लिखकर भेजूंगा। बहते समाज में अपने आप को बांध कर रख पाना बड़ा दुस्कर कार्य है। हम आपको साधुवाद देते हैं- आपने 'छाया दी' के माध्यम से हमें बांध कर हमारा मार्ग-दर्शन किया। अभी बहुत छोटा हूं- अधिक कहूंगा तो धृष्टता होगी। आपसे आशीर्वाद मिलते रहे यही कामना है। 'आपका तिस्ता-हिमालय' की प्रति नित्य मिल रही है। हम लाभान्वित नित्य हो रहे हैं। बस इतना ही!!

**-डॉ. जगमोहन सिंह**
**सहायक प्रवक्ता, हिंदी विभाग,**
**रानीगंज महिला महाविद्यालय, प.बंगाल**

**'अमरावती सृजन पुरस्कार-2019'**

''सामाजिक, सांस्कृतिक व साहित्यिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान करने वाले व्यक्तियों को प्रतिवर्ष अगले साल के फरवरी महीने में प्रदेय''

*सम्बद्ध व्यक्तियों से अनुरोध है कि वे अपने विशिष्ट कार्यों/कृतियों को निम्नलिखित संस्था के पास 30 सितम्बर-2019 तक भेजें।*

सचिव
विद्वत मंडली
'आपका तिस्ता-हिमालय'
मुक्तधारा प्रेस एण्ड पब्लिकेशन्स
'अमरावती'
अपर रोड, गुरुंग नगर, पो. प्रधान नगर
सिलीगुड़ी-734003, जिला-दार्जिलिंग, प.बं.
मो: 094340-48163

# लोकसभा चुनाव
# चुनावी बॉन्डों का गोरखधंधा

-चंद्र प्रकाश झा

***पूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त एस.वाय. कुरैशी के अनुसार चुनावी बॉन्ड्स ने लंपट (क्रोनी) पूंजीवाद को वैधता प्रदान कर दी है। इसके कारण राजनीतिक दलों को दिए जाने वाले चंदों में पारदर्शिता खत्म हो गई है। इससे सरकार को तो पता चला जाता है कि किसने किस दल को कितना धन दिया। लेकिन नागरिकों को अंधेरे में रखा जाता है। उनका कहना है कि भाजपा के नेतृत्व वाले नेशनल डेमोक्रेटिक एलायंस की सरकार ने जनवरी 2018 में चुनावी बॉन्ड्स स्कीम शुरू करते समय वादा किया था कि इससे राजनीतिक दलों को धन देने में पारदर्शिता आएगी। लेकिन जो हुआ वो ठीक उलटा है।***

इस 17वीं लोकसभा के चुनाव के ठीक पहले चुनावी बॉन्ड्स की बिक्री में भारी उछाल आ गया। इसकी भनक नागरिकों को शायद ही लगती, अगर पुणे के विहार दुर्वे नाम के एक व्यक्ति ने बरसों के आंदोलन के फलस्वरूप सभी को प्राप्त संवैधानिक सूचना के आधिकार (आरटीआई) के तहत कोशिश न की होती। उनके द्वारा दाखिल सूचना के आधिकार की एक अर्जी के जवाब में बताया गया कि सार्वजनिक क्षेत्र के स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने 2019 के आम चुनावी वर्ष में पिछले वर्ष की तुलना में 62 प्रतिशत अधिक चुनावी बॉन्ड्स बेचे। इस बैंक ने पिछले वर्ष मार्च, अप्रैल, मई, जुलाई, अक्टूबर और नवंबर में कुल मिलाकर 1,056.73 करोड़ रुपये के ये बॉन्ड्स बेचे थे। लेकिन इस वर्ष जनवरी और मार्च में ही इनकी बिक्री 1,716.05 करोड़ रुपए के बॉन्ड्स देश के वाणिज्यिक राजधानी मुंबई में बिके। कोलकाता में 370 करोड़ रुपए, हैदराबाद में 290 करोड़ रुपए, दिल्ली में 205 करोड़ रुपए और भुवनेश्वर में 194 करोड़ रुपए के ये बॉन्ड बिके। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया इन बॉन्ड्स की बिक्री की केंद्रीय वित्त मंत्रालय द्वारा जारी अधिसूचना के बाद अपनी निर्दिष्ट शाखाओं में निर्धारित अवधि में करती है।

इस बीच, मध्य प्रदेश के नीमच के सामाजिक कार्यकर्ता चंद्रशेखर गौड़ की आरटीआई अर्जी से यह जानकारी मिली कि मार्च 2018 से जनवरी 2019 के बीच राजनीतिक दलों को इलेक्टोरल बॉन्ड के जरिए जो चंदा मिला उनमें 99.90 प्रतिशत चंदा 10 लाख और एक करोड़ रुपए मूल्य का था। करीब दस महीनों में दाताओं ने राजनीतिक दलों के लिए कुल 1,407.09 करोड़ के इलेक्टोरल बॉन्ड खरीदे, जिनमें से कुल 1,403.90 करोड़ के बॉन्ड सिर्फ 10 लाख और एक करोड़ रुपए मूल्य के थे। यह जानकारी नहीं दी गई है कि कितने राजनीतिक दलों ने इलेक्टोरल बॉन्ड को भुनाया है, चंद्रशेखर गौड़ को दी गई जानकारी के मुताबिक दाताओं ने 10 लाख के कुल 1,459 इलेक्टोरल बॉन्ड, एक करोड़ के 1,258 बॉन्ड्स, एक लाख के 318 बॉन्ड, दस हजार के 12 बॉन्ड और एक हजार के कुल 24 बॉन्ड खरीदे। इस वर्ष की बॉन्ड के तीसरे दौर की बिक्री एक मई से होगी।

चुनावी वर्ष में इलेक्टोरल बॉन्ड्स की बिक्री में आए उछाल से राजनीतिक चंदों के लेन-देन के इस नए 'गोरखधंधे' के निहितार्थ को समझने में आसानी हो सकती है। समयांतर के अगस्त 2018 के अंक में हमने राजनीतिक दलों के दिए जाने वाले चंदे की विस्तृत पड़ताल की थी। इस अंक में हम इलेक्टोरल बॉन्ड स्कीम (चुनावी बॉन्ड योजना) की विशेष चर्चा करेंगे।

गौरतलब है कि संसदीय लोकतंत्र में राजनीतिक दलों को अपना खर्च पार्टी के बाहर से ही जुटाना पड़ता है। यह खर्च, चुनावों में बेतहाशा बढ़ जाता है। इसके लिए धन उपलब्ध कराने की राष्ट्र-राज्य से सांविधिक व्यवस्था करने की मांग के बावजूद कुछ भी ठोस उपाय नहीं किए गए हैं। ऐसे हालात में ये पार्टियां पूंजीपति वर्ग से घोषित-अघोषित चंदा लेती हैं। भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष अमित शाह यह कहते नहीं अघाते कि वह 11 करोड़ सदस्यों के साथ भारत ही नहीं दुनिया की सबसे

बड़ी पार्टी है। पर उन्होंने कभी यह सत्य नहीं बताया कि भाजपा भारत की सबसे अमीर पार्टी भी है और उसे यह अमीरी राजसत्ता में रहने से मिली है। माना जाता है कि भारत के पूंजीपति वर्ग ने 2014 में मोदी को सत्ता में लाने में बहुत मदद की थी। यह भी माना जाता है कि भाजपा द्वारा किए चुनावी वादों के अनुरूप मोदी सरकार द्वारा जीएसटी, दिवालिया कानून जैसे किए गए तमाम आर्थिक उपायों से पूंजीपति वर्ग प्रसन्न है। इसकी पुष्टि अधिकृत सूत्रों के हवाले से मीडिया की इन खबरों से होती है कि इलेक्टोरल बॉन्ड्स की खरीद-बिक्री में लगे धन का कम से कम 90 प्रतिशत भाजपा को ही मिला है।

क्या हैं ये बॉन्ड्स

इलेक्टोरल बॉन्ड्स एक तरह से बैंक नोट है जो उसका धारक बिना किसी ब्याज के भुना सकता है। इसे भारत का कोई भी व्यक्ति खरीद सकता है। देश में पंजीकृत कोई संस्था भी इसे खरीद सकती है। ये बॉन्ड्स स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के निर्दिष्ट शाखाओं से एक हजार रुपए, 10 हजार रुपए, एक लाख रुपए, 10 लाख रुपए और एक करोड़ रुपए के गुणक में जारी किए जाते हैं। कोई भी दाता, केवायसी (नो योर कस्टमर) की शर्तें पूरी करने वाले अपने खाते के जरिए इसे खरीद सकता है। वह दाता ये बॉन्ड अपनी पसंद की राजनीतिक पार्टी को दान दे सकता है। बॉन्ड के धन की निकासी उक्त पार्टी के निर्वाचन आयोग द्वारा सत्यापित बैंक खाते से 15 दिनों के भीतर की जा सकती है। हर उस राजनीतिक पार्टी जो 1951 के लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के सेक्शन 29 ए के तहत पंजीकृत है और जिसने हालिया लोकसभा अथवा विधानसभा चुनाव में डाले एक कुल वोट का न्यूनतम एक प्रतिशत प्राप्त किया हो, उसे निर्वाचन आयोग एक सत्यापित खाता खोलने की अनुमति देता है। चुनावी बॉन्ड का लेन-देन इसी खाते के जरिए किया जा सकता है। ये बॉन्ड केंद्र सरकार द्वारा निर्दिष्ट प्रत्येक तिमाही, जैसे कि जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर के प्रथम 10 दिनों तक खरीदे जा सकते हैं। जिस वर्ष लोकसभा चुनाव हाने होते हैं उस वर्ष में केंद्र सरकार द्वारा निर्दिष्ट अतिरिक्त 30 दिनों के लिए भी ये बॉन्ड खरीदे जा सकते हैं। बॉन्ड पर दाताओं के नाम नहीं होंगे। लेकिन बैंक के पास दाताओं और उन दलों के विवरण उपलब्ध होंगे जिन्हें ये बॉन्ड दान दिए गए हैं। लेकिन यह जरूरी नहीं कि राजनीतिक दलों को दाताओं का विवरण पता चले। सरकारी तौर पर बताया गया है कि इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि किसी भी पार्टी को बॉन्ड के दान का ब्यौरा उसके सत्यापित बैंक खाते की उसकी बैलेंस शीट में तो होगा लेकिन यह सब गोपनीय रखा जाएगा। खुरपेंच इसी गोपनीयता को लेकर है जो लोकतांत्रिक चुनाव में चंदों के बतौर धन के लेन-देन की पारदर्शिता को रोकता है।

वित्तमंत्री

केंद्रीय वित्तमंत्री अरुण जेटली के अनुसार 2017 के बजट के तहत शुरू की गई, इस इलेक्टोरल बॉन्ड्स स्कीम का उद्देश्य नगदी विहीन अर्थव्यवस्था की तरफ कदम बढ़ाना और देश में

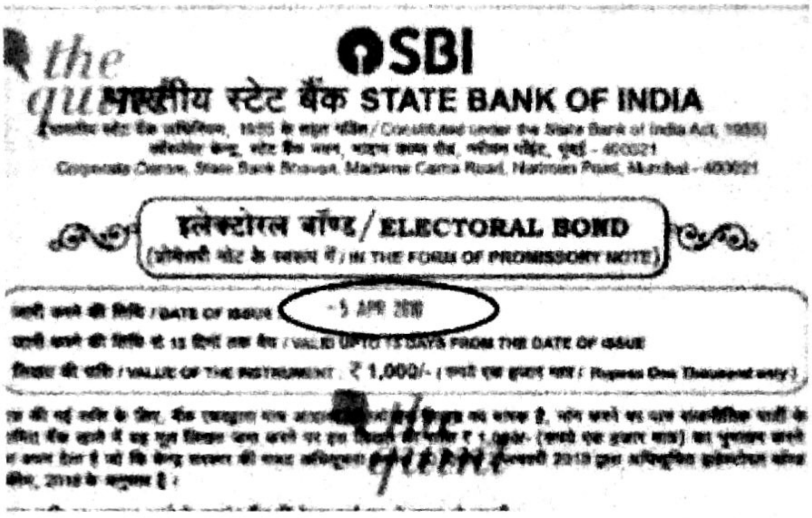


राजनीतिक फंडिंग की व्यवस्था को 'साफ-सुथरा' करना है। वित्तमंत्री ने फरवरी 2017 में केंद्रीय बजट पेश करते समय कहा था कि किसी भी राजनीतिक दल को नगद में अधिकतम दो हजार रुपए का ही चंदा दिया जा सकता है। लेकिन वे इससे अधिक चंदा इलेक्टोरल बॉन्ड के अलावा चेक अथवा डिजिटल रूप में प्राप्त कर सकते हैं। चंदा देने और लेने वाले को भी कर में छूट मिलेगी बशर्ते वे अपना आय कर निटर्न भरें।

***पूर्व मुख्य निर्वाचन आयुक्त एस.वाय. कुरैशी के अनुसार चुनावी बॉन्ड्स ने लंपट (क्रोनी) पूंजीवाद को वैधता प्रदान कर दी है।*** *इसके कारण राजनीतिक दलों को दिए जाने वाले चंदों में पारदर्शिता खत्म हो गई है। इससे सरकार को तो यह पता चल जाता है कि किसने किस दल को कितना धन दिया। लेकिन नागरिकों को अंधेरे में रखा जाता है। उनका नागरिकों को अंधेरे में रखा जाता है। उनका कहना है कि भाजपा के नेतृत्व वाले नेशलन डेमोक्रेटिक एलायंस की सरकार ने जनवरी 2018 में चुनावी* ***बॉन्ड्स स्कीम शुरू करते समय वादा किया था कि इससे राजनीतिक दलों को धन देने में पारदर्शिता आएगी। लेकिन जो हुआ वो ठीक उलटा है।***

इस स्कीम के पहले 20 हजार रुपए से अधिक दिए जाने वाले किसी भी राजनीतिक चंदे की जानकारी निर्वाचन आयोग को देनी पड़ती थी। इससे निर्वाचन आयोग को पता रहता था कि किसने किसको कितना धन दिया है। यह भी पता चल जाता था कि क्या चंदा देने वाले को चंदा के एवज में सरकार से कोई ठेका, ऋण, लाइसेंस आदि मिला है। पहले कोई कंपनी पिछले तीन वर्ष के अपने कारोबार में मुनाफे के 7.5 प्रतिशत से अधिक चंदा नहीं दे सकती थी। लेकिन यह सब कुछ अब खत्म हो गया है। बॉन्ड्स स्कीम के तहत कोई भी कंपनी अपने मुनाफे का शत प्रतिशत चंदा दे सकती है। कुरैशी का कहना है कि राजनीतिक दलों को लंपट पूंजीपतियों द्वारा इस तरह धन देने के लोकतांत्रिक व्यवस्था में दूरगामी खतरनाक अंजाम हो सकते हैं। उन्होंने दो टूक कहा कि कोई पूंजीपति मुफ्त में धन नहीं देता है। अगर किसी पूंजीपति ने धन दिया है, तो वह उसके एवज में कुछ न कुछ लेगा ही और इससे राजकाज में उसकी दखल का रास्ता बढ़ेगा। 2010 से 2012 तक मुख्य निर्वाचन आयुक्त रहे कुरैशी ने सुप्रीम कोर्ट में इस स्कीम का विरोध करने के लिए निर्वाचन आयोग की सराहना की। लेकिन सरकार ने निर्वाचन आयोग के रुख का विरोध किया। सुप्रीम कोर्ट ने भी चुनावी बॉन्ड्स की स्कीम पर अंतरिम रोक लगाने से इंकार कर दिया।

**बॉन्ड को लेकर केंद्र सरकार एवं निर्वाचन आयोग में मतभेद**

चुनावी बॉन्ड की वैधता को चुनौती देने वाली